नरगिस

जन्मः 1 जून, 1929

निधनः 3 मई, 1981

नरगिस का नामकरण करने और नायिका के रूप में पेश करने का श्रेय फिल्मकार मेहबूब खान को है।

जेमिनी सनशाइन में जन्मी नरगिस का ख्याल आते ही दो शख़्सियत सामने आती है। पहली है, घुँघराले बालों तथा नशीली आँखों वाली नरगिस की। दूसरी है, सफेद साड़ी में भारतीय नारी की संपूर्ण अस्मिता को गंभीरता से प्रतिबिम्बित करती माथे पर गोल बिंदी लगाए नरगिस की। एक ओर वह टॉम ब्वाय की तरह मशहूर थीं इसके विपरीत परदे पर उन्होंने भारतीय नारी को जीवंत किया। हिन्दी सिनेमा में नरगिस के प्रवेश से एक ऐसे दौर की शुरूआत हुई जहाँ से महिलाओं को फिल्मों में काम करने की तमाम मुश्किलें दूर हुई। नरगिस के बारे में कहा गया था कि सितारे जन्म लेते हैं लेकिन उनकी कर्मठता ने यह साबित किया कि सितारे स्वंय को सँवारते भी है। उन्होंने अभिनय के मानक तय किए। बहुआयामी भूमिकाएँ निभाई। दयालु तथा ममता भरी थी। धार्मिक भेदभाव से अपने को ऊँचा उठाकर सबके साथ समान व्यवहार किया। स्पॉट ब्वाय को भी उतनी ही इज्जत देती थीं, जितनी किसी बड़े कलाकार को दी जाती है।

फातिमा रशीद और तेजेश्वरी से लेकर बेबी रानी और नरगिस इन नामों का सफर पार करने के बाद लोगों ने शफ्फाक बदन, नशीली और तृप्त न होने वाली इन आँखों और मादक मुस्कान वाली लड़की को नरगिस के रूप में पहचान दी। हिन्दू पिता की पुत्री होने के कारण उन्होंने प्रेम से इनका नाम तेजेश्वरी रखा। नरगिस को बचपन में बेबी रानी के नाम से पुकारा जाता था। बेबी रानी ने छः साल की उम्र में अपनी माँ के साथ तलाश-ए-हक फिल्म में काम किया। पिता के संस्कारों और माँ के अनुशासन से नरगिस के व्यक्तित्व

में कसाव आया। वह पढ़ाई कर अपने पिता की तरह मेडिकल में कॅरियर बनाना चाहती थीं। परिजनों की भी राय उनकी पढ़ाई को लेकर अच्छी थी। क्वीन मेरी स्कूल से उन्होंने कैम्ब्रिज सर्टिफिकेट पास किया। मुम्बई में पलने-बढ़ने के कारण उनमें महानगरीय सभ्यता के साथ वहाँ के तौर-तरीके भी आ गए थे। डॉक्टर बनने का ख्वाब देखने के बाद भी वह कॉलेज नहीं जा पाई और फिल्मों की बेहतरीन अदाकारा बन गई। मुस्लिम परिवार में रहने के बाद भी वह अंधविश्वासों, रूढ़ियों के बजाए आधुनिकता और परंपरा का अद्भूत संगम थीं। मैरीन ड्राइव पर रहने वाली नरगिस एक टॉम ब्वाय की तरह रहती थीं।

बेबी रानी को फिल्म में लिया, पर इस नाम के साथ फिल्म की हीरोइन तो नहीं जा सकती थी। फातिमा और तेजेश्वरी दोनों नामों में हीरोइन के नाम की अपील नहीं थी। मेहबूब 'न' अक्षर' में विश्वास रखते थे और नादिरा का नाम भी उन्होंने ही रखा था। नए नाम नरगिस के साथ वह फिल्मों में आईं और युवा होते ही परिवार का महत्वपूर्ण हिस्सा हो गईं।

नरगिस की माँ जद्दनबाई जब कलकत्ता आईं और वहाँ इनके प्रयास चल रहे थे, तब इनकी मुलाकात रावलपिंडी (पंजाब) से आए मोहनबाबू से हुई। उत्तमचंद मोहनचंद 'मोहनबाबू' मेडिकल की पढ़ाई के लिए इंग्लैण्ड जा रहे थे और कलकत्ता में उससे संबधित कोर्स करने आए थे। वह विदेश जाने के लिए जहाज का इंतजार कर रहे थे, लेकिन यह इंतजार उन्होंने जद्दन के मिलने पर रद्द कर दिया। जद्दन से उनके प्रेम को उनके परिजनों ने स्वीकार नहीं किया क्योंकि यहाँ धर्म की दीवार सामने थी। लेकिन मोहनबाबू ने उनके लिए न सिर्फ परिवार छोड़ा, बल्कि करियर को भी तिलांजलि दे दी। वह ब्राह्मण से मुस्लिम बने और अब्दुल रशीद कहलाए। उन्होंने जब जद्दन से शादी की, तब वह पहले से विवाहित और दो लड़को अख़्तर और अनवर की माँ थीं। उन्होंने 1928 में कलकत्ता में जद्दन से विवाह किया,

उस समय जद्दन की उम्र 27 बरस थी। मोहनबाबू ने प्रेम की खातिर क्या बलिदान दिया, यह तो गिना नहीं जा सकता, लेकिन उन्होंने जद्दन के जीवन में महत्वपूर्ण योगदान किया। समाज में मिलने वालों के सामने वे कभी-कभी जद्दन का परिचय जयादेवी के रूप में भी कराते थे। उन्होंने जद्दन की कुछ कर गुजरने की जिद को पूरा करने में अपना जीवन लगा दिया। मेडिकल में जाने का उनका सपना बाद में नरगिस को भी दिखाई देने लगा, लेकिन फिल्मों में करियर बनाने के कारण वह भी इसके लिए समय नहीं दे पाईं। उन्होंने अपने पिता के इस स्वप्न को बाद में समाजसेवा और बीमारों की सेवा कर पूरा किया। मोहनबाबू के प्रेम भरे व्यवहार, सुरक्षा और ताकत के कारण परिवार को अधिक परेशानियों का सामना नहीं करना पड़ा।

मेहबूब खान भारतीय सिनेमा का ऐसा नाम है जिसने फिल्मों को बनाने के साथ कई कलाकारों को स्थापित किया। उन्होंने मूक सिनेमा से लेकर बोलती फिल्मों का सफर तय किया। इस दौर में होने वाले परिवर्तनों को देखा और महसूस किया था। उन्होंने देविका रानी के समय ट्रेंड सेट करने वाली फिल्म 'औरत' बनाई। यही फिल्म बाद में नरगिस के साथ 'मदर इंडिया' बनी। नरगिस को फिल्मों में लाने का श्रेय उन्हें दिया जाता है। जद्दन के घर में उनका आना-जाना था और यहीं से उन्होंने नरगिस को फिल्मों का ऑफर दिया। भारतीय नारी में विश्वास रखने वाले मेहबूब की फिल्मों में भरतीयता के सजीव दृश्य हैं। उन्होंने नरगिस को चौदह साल की उम्र में 'तकदीर' में काम करते ही नरगिस की तकदीर बदल गई। बिना किसी तदबीर के नरगिस फिल्मों में आईं और मुकाम स्थापित किया।

उन्होंने नरगिस को स्क्रीन टेस्ट के लिए बुलाया और तकदीर फिल्म में काम दे दिया। इसकी सूचना घर में मिलते ही उनका भाई

न्यूयॉर्क अस्पताल में नरगिस भरती थी। सुनील दत्त नहाने के लिये घर भी नहीं जाते थे। हाथों में जलती अगरबत्ती लेकर हनुमान चालीसा का पाठ करते अस्पताल की परिक्रमा लगाया करते थे।

मुम्बई के ब्रीच केंडी अस्पताल में नरगिस ने 3 मई 1981 को आखरी सांस ली। उसी दिन संजय दत्त की पहली फिल्म रॉकी रिलीज हुई।

मीडिया ने नरगिस की मौत को अधिक कवरेज दिया और उनके लिये कहा-लास्ट जर्नी ऑफ ए क्वीन। ए टाइम फॉर फेयरवेल। सेल्यूट टू द लेडी इन वाइट, एण्ड ऑफ एन एरा।

अख्तर उन्हें बाँहों में लेकर पूरे घर में खुशी से नाचा। फिल्म में मोतीलाल और चंद्रमोहन को लिया गया। इस तरह मरीन ड्राइव की टॉमब्वाय, हीरोइन बन गई। फिल्म में काम करते समय नरगिस को कोई परेशानी नहीं हुई, क्योंकि सभी में सहयोगात्मक रवैया रखा। फिल्म की इस नई नायिका में खूबसूरती भगवान की देन थी। आवेश से भरपूर, संवेदनशील, भावात्मक, फोटोजेनिक चेहरा, धनुषाकार होठों की श्वामिनी, ताजगी से लाजवाब किसी संतुलित लैंडस्केप का नजारा देती थीं। नरगिस की आँखें चमकीली होने के साथ कभी न संतुष्ट होने वाली दिखती थीं। नरगिस का अपना हेयर ड्रेसर, मेकअप और ड्रेस डिजाइनर रहता था। अंडाकार चेहरे वाली इस युवती को मीडिया में खासा स्थान मिला। उन्हें कन्वेंशनल ब्यूटी कहा गया। फिल्म इंडिया ने इनके चेहरे के लिए 'हार्सी लुक' 'पापाया फेस' शब्दों का उपयोग किया। उनके बारे में के.ए. अब्बास ने कहा था कि सितारे जन्म लेते हैं। किसी मूर्ति की तरह असाधारण इस चेहरे को इंडस्ट्री ने हाथों-हाथ लिया। इसके बाद उन्हें 1945 में मेहबूब ने 'हूमायँ' में कास्ट किया।

मीडिया ने पहले हिन्दू-मूस्लिम विषय के कारण फिल्म की बुराई की। बाद में उसने ही नरगिस की प्रशंसा में कसीदे काढ़े। उनकी परवरिश मुक्त वातावरण में हुई और पिता के हिन्दू होने के कारण वह इस प्रकार के धार्मिक बंधनों में नहीं जकड़ी थीं जिनमें समाज बँधा था। इसी प्रकार मुस्लिम महिलाओं की शिक्षा के लिए आवाज उठाने वाली फिल्म 'ऐलान' आई। भारतीयता के प्रति मेहबूब का गहरा लगाव उनके विषयों में दिखाई दिया। 1946 एक वर्ष ऐसा रहा जिसमें नरगिस की कोई फिल्म नहीं आई। 1947 में उनकी 'रोमियो एंड जूलियट' और 'मेंहदी' आई। यह फिल्म उनके भाई के बैनर नरगिस आर्ट कंपनी के तहत बनी और इसी से उनके छोटे भाई अनवर ने अभिनय की दुनिया में कदम रखा। 'हूमायूँ' के रिलिज के समय से ही आजादी का स्वर मुखर हो गया था और 'रोमियो एंड जूलियट' के रिलीज होते ही देश के दो हिस्से हो गए। लाहौर का मौसम बदल गया। नरजहाँ और खुर्शीद अचानक पाकिस्तानी हो गए। 1948 में 'अंजुमन' आई। इसमें उनके साथ जयराज, दुर्गा खोटे एवं नीलम थे। यह वर्ष नरगिस के फिल्मी करियर का सर्वाधिक व्यस्त वर्ष रहा। एक साथ उनकी कई फिल्में रिलिज हुईं, जिन्होंने पर्दे पर धमाका किया। 'अनोखा प्यार, मेला, आग, अंजुमन सभी एक के बाद एक रिलीज हुई और नरगिस को बतौर अदाकारा स्थापित करती चली गईं। 'अनोखा प्यार' प्रेम त्रिकोण पर बनी कहानी थीं, जिसका निर्देशन एम. धरमसी ने किया और संगीत अनिल विश्वास ने दिया था। जिया सरहदी की लिखी कहानी में दिलीप कुमार,

फिल्म रात और दिन में नरगिस का डबल रोल था। इस फिल्म के लिये उन्हें सर्वोत्तम अभिनेत्री का पुरस्कार मिला।

राजकपूर हमेशा नरगिस को सफेद साड़ी में देखना चाहते थे जब तक वह राजकपूर के साथ रहीं, हमेशा सफेद साड़ी पहनी।

आरंभ में नरगिस और दिलीप कुमार की जोड़ी ने तहलका मचाया। बाद में राजकपूर के जुड़ जाने से सारी केमिस्ट्री बदल गई। मदर इंडिया में नरगिस को आग से बचाने में सुनील दत्त ने अपनी जान को जोखिम में डाला था बाद में नरगिस ने अपना पुरा जीवन सुनील को सौंप दिया।

नलिनी जयवंत के साथ नरगिस ने अप्रतिम अभिनय को जिया था। 'मेला' में नायक-नायिका को बचपन के साथ बढ़ते प्रेम को परवान चढ़ते दिखाया गया।

इन फिल्मों के बाद नरगिस-दिलीप की जोड़ी रोमांटिक जोड़ी बनकर उभरी, जिसे दर्शकों का बेहतर प्रतिसाद मिला। इसके बाद 'आग' ने इस जोड़ी के भ्रम को तोड़कर पर्दे पर एक नई केमिस्ट्री को जन्म दिया। यह फिल्म सिनेमा का लैंडमार्क बनने के साथ ही नरगिस के जीवन में एक महत्वपूर्ण मुकाम बनी। यह समय कई स्थापित लोगों का था और फिल्मों में राज-दिलीप-देव की तीकड़ी ने अपना साम्राज्य फैला रखा था। ये बॉक्स ऑफिस में सर्वाधिक बिकने वाले सितारे थे।

इस समय इप्टा, पृथ्वी थियेटर, उदयशंकर स्कूल से कई मँजे हुए कलाकार फिल्मों में आए। नरगिस ने इस सबकी दौड़ में स्वयं के अवलोकन और अनुभवो के आधार पर अपना अलग स्थान बनाया। इस समय तक नरगिस पर परिवार और भाइयों के बच्चों की जिम्मेदारी आ गई थी। 1949 इंडस्ट्री के लिए यादगार वर्ष रहा, क्योंकि इस समय नायिका और गायिका की मोनोटोनी टूटी। लता मंगेशकर के पार्श्वगायन में आने के साथ ही नरगिस को पर्दे पर नया जीवन मिला। अब तक बने सुरैया के दबाव को लता के स्वरों ने नायिका के लिए आजाद कर दिया। इस वर्ष मेहबूब की 'अंदाज' और राज कपूर की 'बरसात' आईं

और दोनों ही फिल्में सफल रहीं। इसी दौरान शंकर-जयकिशन जैसे संगीतकार मिले। 'बरसात' में उन्होंने ग्यारह गाने बनाए। केदार शर्मा निर्देशित 'जोगन' भी नरगिस की अदाकारी का बेहतर नमूना थी, लेकिन यह अंदाज जितनी सफल नहीं थी।

नरगिस एक मेहनती सितारा थीं, जो अभिनय के लिए प्रयोग करने के लिए तैयार रहती थीं। उन्होंने फिल्म 'अनहोनी' के लिए सिगरेट पी। 'अदालत' में कोठेवाली का किरदार किया। 'रात और दिन' के लिए रास्ते पर भटकने वाली लड़की का रोल किया। इतने बुरे किरदारों के साथ 'लाजवंती' और 'जोगन' में अच्छे इंसानों को निभाया। उनके किए कामों में नायिका ने हमेशा अपने रोल के साथ सच्चाई और न्याय किया। इंडस्ट्री में उनकी इस अदाकारी को काफी सराहा गया। 1950 के दशक के मध्य आते तक नरगिस अपने पुरूष सह-कलाकारों की तरह फीस की माँग रखने लगीं। इस समय तक फिल्मों पर विदेशी फिल्मों का प्रभाव दिखाई देने लगा था। 1952 में पहला विदेशी फिल्म फेस्टिवल मुम्बई में हुआ। इससे नवीनता आई।

नरगिस के मन में सामाजिक उत्तरदायित्व के साथ आत्मविवेक, दर्द और पढ़ने के प्रति गहरी रूचि थी। उन्होंने इंडस्ट्री को अपनी योग्यता से और संपन्न करने की कोशिश की। उनमें पवित्रता के भी अंश

थे। फिल्में छोड़ने के बाद उन्होंने बाद की नायिकाओं के बारे में कहा भी था - 'मैनें अभिनय पर अधिक जोर दिया। आजकल तो कपड़ों, मेकअप और बालों पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है बजाए अभिनय के। इसी कारण हर नतीजा भी एक समान आता है।' उनके अभिनय में अपनाई गई आध्यात्मिकता के कारण एक ताजगी थी और आत्मा से निकली सच्ची आवाज प्रतीत होती थी। वह अपने काम के प्रति समर्पित थीं और बिना मतलब का कुछ भी करने से परहेज करती थीं। उन्होंने मधुबाला की तरह दर्दनाक रिश्तों और मीनाकुमारी की तरह समझौते कभी नहीं किए। आत्मसम्मान की सीमा को बरकरार रखते हुए अभिनय की सीढ़ीयाँ पार कीं। इसी कारण राज और उनके संबंधों के बाद भी उनका व्यक्तिगत सम्मान बराबर बना रहा।

राजकपूर और नरगिस एक ऐसी जोड़ी जिसने सिल्वर स्क्रीन पर जादू दिखाया। उनके रोमांस ने एक ऐसे एहसास का अनुभव कराया कि लोगों ने उनकी भावनाओं को अपने अंदर महसूस किया। यह एक ऐसी आग थी जिसकी चिंगारियाँ शूटिंग के समय महसूस कर ली गईं थीं। 'आग' फिल्म के समय

जद्दनबाई ने इसकी शूटिंग मुम्बई में करने का आग्रह किया था, क्योंकि इससे उनके अन्य कार्यक्रम प्रभावित हो रहे थे। 1948 में 'बरसात' की शूटिंग कश्मीर की जगह महाबलेश्वर में करने की बात कही, क्योंकि इससे नरगिस की सुरक्षा की चिंता जद्दन और अख्तर कर सकते थे। लेकिन प्रेम की दीवानगी रास्ता निकाल लेती है। दोनों परिवारों में इस रिश्ते को लेकर एतराज था, क्योंकि राज शादीशुदा थे और दोनों का मज़हब भी इस बात की इजाजत नहीं दे रहा था। दोनों को जुदा करने के बारे में कोई कुछ नहीं कर पाया, पर जद्दन की निगाहें सदा नरगिस पर बनी रहतीं। प्रेम करने से नरगिस को वह नहीं रोक पाईं। इसी दौरान 1951 में 'आवारा' आई और दिल के दौरे से जद्दन की मृत्यु हो गई। पिता का साया तो दो साल पहले ही नरगिस के सिर से उठ चुका था। माँ की मौत, भाई के अनुशासन और रिश्तेदारों की तानाकशी ने उन्हे बगावती बना दिया। उन्हें लगा कि जैसी जिंदगी वह खुद चाहती है, वैसे नहीं जी पा रही हैं।

इस रिस्ते के बारे में कहा जाता है कि यह इस सीमा तक नहीं जाता, यदि जद्दनबाई जीवित रहतीं। राज की फिल्मों में नायिका को दी जाने वाली तरजीह से जद्दन खासी खुश नहीं थीं। उनका कहना था कि पुरूष आधारित फिल्मों में काम करने से नरगिस का अभिनय प्रभावित होगा। ऐसी ही स्थिति राजकपूर के घर में थी। वहाँ जवान और खुबसूरत बीवी इंतजार करती थी। वह अपनी शिकायतें पृथ्वीराज से कर आँसू बहाया करती थी। लेकिन कृष्णा में आपसी समझ और त्याग की भावना अच्छी थीं, इसलिए उनका रिस्ता टूटा नहीं। पति-पत्नी के इस रिश्ते को चलाने में कृष्णा का व्यवहार जहाँ तक कारण था उसी तरह राजकपूर की मानसिकता भी इस रिश्ते को जिंदा रखने में मददगार रही। वह स्त्री सुंदरता के जितने कायल थे उतने ही आदमी को महिलाओं की ओर से मिलने वाली सुविधाओं और परंपरा का निर्वाह करना चाहते थे। नरगिस का व्यक्तित्व और मानसिकता इसके विपरीत थी। वह इस संबंध को जन्मों का संबंध मानती थीं। वह इसे सिर्फ अफेयर न मानकर कभी न खत्म होने वाली चाह मानती थीं।

नरगिस और राज के रिश्ते की पहली पायदान पर कुछ अलग किस्म की फिजाँ रही। फिल्मों में काम शुरू करने के बाद नरगिस को राज के रूप में ऐसा व्यक्ति मिला, जो उनकी बात को समझ सकता था। दिलीप के साथ के अनुभवों के बाद राज में उन्हें प्रेरणा मिली, लेकिन बाद में उन्हें पता चला कि राज के साथ उनका स्वंय का कोई व्यक्तित्व नहीं है। वह उन्हें सिर्फ अपनी बातों को सिद्ध करने के लिए लोगों का उपयोग

करते हैं। इस रिश्ते में भी दरारें आईं, क्योंकि एकतरफा चलने वाले इस संबंध में कई मुकाम ऐसे थे जब राज, नरगिस का साथ नहीं दे सकते थे। रिश्ते को लेकर उनके दिमाग में दो बातें साफ हो गई थीं कि वह इस रिश्ते को स्थायित्व देने में सक्षम नहीं है। इसी प्रकार आर. के. बैनर में राज सिर्फ स्वंय को स्थापित करने की कोशिश कर रहे थे। उनकी फिल्म में नायक का किरदार मजबूत दिखाया जाता और उसी को साबित करने के प्रयास रहते। हीरोइन को सिर्फ पेड़ के पास घूमने और हीरो द्वारा गाए जाने वाले गीत को सार्थक करने के लिए उपयोग किया जाता।

'बरसात' में नायिका को जहाँ स्कोप मिला, वहीं 'आवारा' और 'श्री 420' में उन्होंने साथ देने वाली हीरोइन का किरदार करने से साफ इंकार कर दिया था। राज की स्वंय को सर्वश्रेष्ठ हीरो मानने की इस जिद को उन्होंने 'मेरा नाम जोकर' के बाद छोड़ा। लेकिन उनकी जगह फिल्मों में झरने के नीचे नहाने वाली नायिकाओं ने ले ली। नरगिस शुरू से ही इस प्रकार के काम के खिलाफ थीं। व्यक्तिगत अहम के इस टकराव के कारण नरगिस धीरे-धीरे आर. के. से दूर होती चली गई। उनके भाई अख्तर कभी भी राज लिए अपना मन साफ नहीं कर पाए। उनका कहना था कि उनकी बहन से इस बैनर को बनाने के लिए अपने गहने तक बेच दिए थे। उन्हें इस बात का मलाल था कि जिस अभिनय के लिए लोग मनचाही फीस दे रहे थे, उसे नरगिस के बिना किसी मोलभाव के आर.के. पर लुटा दिया।

'आग' में नरगिस के लिए रोल लिखने से शुरूआत करने वाले राजकपूर ने भी अपने इस संबंध को स्वीकारने में कभी कोताही नहीं की। दोनों में स्वभावगत अंतर जो भी रहा हो, उन्होंने नरगिस के जीवन से चले जाने के बाद स्वीकारा कि जो मेरी हीरोइन है, वह मेरी पत्नी नहीं है और जो मेरे बच्चों की माँ है, वह मेरी हीरोइन नहीं है। उनकी चाहत थी कि दर्शक रोमांस को देखें नहीं, फील करें।

वर्ष 1956 में 'जागते रहो' रिलीज हुई और यह राज-नरगिस की आखरी फिल्म थी। दस सालों की अंतरगता में दरारों का आना इनकी विदेश यात्रा के समय से शुरू हुआ। राज के अन्दर के आदमी ने सभी फिल्मों की सफलता का सेहरा खुद के सिर पर रखना शुरू कर दिया, जो सरल ह्रदय नरगिस को

बुरा लगा। इन दरारों में और गहराई तब आई जब राज ने फिल्म को बेचने के लिहाज और सुंदरता एवं प्रेम के चलते दक्षिण की नायिकाओं में रूचि दिखाई। उनकी इस रूचि को भाँपने के साथ ही नरगिस ने अपने अंदर के कलाकार का आकलन किया और स्वंय को राज कपूर से दूर कर लिया। उन्होंने एक बार आर. के. बैनर में वृद्ध महिला का रोल करने से मना किया था, लेकिन राज से अलग होते समय उन्होंने मेहबूब की 'मदर इंडिया' के लिए स्वीकृति दी। उन्हें अहसास नहीं था कि उनका यह निर्णय फिल्म इंडस्ट्री के साथ ही भारतीय नारी को भी एक पहचान दिलाएगा। नरगिस के गॉड फादर मेहबूब

उस समय के बड़े फिल्मकार थे। 1957 में रिलीज 'मदर इंडिया' की कहानी नई नहीं थी। इसी विषय को लेकर 1940 में 'औरत' आ चुकी थी। अपने पुत्र को बंदूक से मारने वाली माँ के साथ फिल्म में परिवार के लिए समर्पित पत्नी और एक महिला मन पर बनी फिल्म के लिए प्रेरणा थे। मेट्रो गोल्डन मेयर की फिल्म 'द गुड अर्थ' और 'पर्ल बक' की कहानी। इसमें एक माँ का परिवार और स्वंय के स्वाभिमान की रक्षा के लिए होने वाला अंतर्द्वंद दिखाया गया था। उनके सहयोगी बाबूभाई मेहता ने फिल्म के लिए गोर्की की कहानी मदर से भी प्रेरण ली।

मेहबूब की इस फिल्म ने अनगिनत आँखों को रोने के लिए विवश किया था। मीडिया के अनुसार फिल्म को देखने के लिए दर्शकों की वैसी ही भीड़ रही, जैसी 'औरत' को देखने के लिए थी। इसमें पहले दिलीप कुमार को लिया गया था, लेकिन उनकी आदत थी कि वह निर्देशकों और लेखकों को अपनी सलाह दिया करते थे। उन्होंने इस फिल्म में यह सुझाव दिया कि उनका डबल रोल रखा जाए पहले पिता और फिर पुत्र। बाद में कहानी वालों ने इसमें बदलाव किया और नए चेहरों को कास्ट किया। इसमें सुनिल दत्त और राजेन्द्र कुमार को लिया गया। नारी अस्मिता को बचाने के लिए अपने बेटे बिरजू को मारने वाली 'मदर इंडिया' के रोल में नरगिस ने अपनी समग्रता से अभिनय किया। युवा पत्नी से लेकर बूढ़ी माँ के रूप में उन्होंने इसमें जान डाल दी। दिलीप से नरगिस की तीन बेहतर फिल्में पूछने पर उन्होंने तीनों के स्थान पर सिर्फ 'मदर इंडिया' का ही नाम लिया। फिल्म इतनी असरकारक थी कि इसके तीस साल बाद सिनेमाघरों में लगने पर भी वही प्रतिक्रिया मिली। 'मदर इंडिया' के रोल के बाद उन्हें इतनी गहराई का कोई भी रोल नहीं लगा। यह फिल्म उनके जीवन का एक परिवर्तनकारी मोड़ बनी। इसी से उन्हें सुनील दत्त के रूप में मजबूत सहारा मिल गया। इस फिल्म ने उन्हें जीवन के कई नए मोड़ दिए, जो उनकी हमेशा की ख्वाहिश थी।

'मदर इंडिया' में मेहबूब ने नए हीरो को कास्ट किया और उन्होंने सोचा कि सभी कलाकार आपस में घुल-मिल जाएँ। यह सोचकर उन्होंने नरगिस को राजेन्द्र कुमार और सुनिल दत्त मे मिलने के लिए काफी समय दिया। उनकी यही मुलाकातें बाद में एक गहरे रिश्ते में तब्दील हो गई। इनकी नजदीकी का कारण 'मदर इंडिया' के सेट पर लगने वाली आग भी है। उस आग में से सुनील दत्त ने नरगिस को बचाया था। कोमल स्वभाव की नरगिस अपने प्राणरक्षक को अपना जीवन दे बैठी। नरगिस की

स्वभावगत मधुरता के कारण वे सुनिल के घर जाने लगीं और उन्होंने सुनील की बहन रानी जो टी.बी. से परेशान थीं उनकी काफी मदद की। यहाँ तक कि उन्होंने उनकी छोटी बच्ची को भी कुछ दिन अपने घर में संभाला। सुनील को उनके परिजनों के प्रति नरगिस का व्यवहार बहुत अच्छा लगा और एक दिन नरगिस को घर छोड़ने जाते समय उन्होंने विवाह का प्रस्ताव रखा। सुनील उस दौर में संघर्ष कर रहे थे। बहुत छोटी उम्र में पिता को खोने के बाद उनके लिए माँ ही उनका सहारा थी। बलराज दत्त उनका वास्तविक नाम था। विभाजन के कारण उनकी जमीन छिन चुकी थी। अपनी माँ और छोटे भाई-बहनों के साथ वे मुम्बई आए और योग्यता के बल पर उन्हें रेडियो सीलोन में अनाउंसर की नौकरी मिल गई थी। उनकी पहली फिल्म 'रेलवे प्लेटफार्म' सफल नहीं थी और वह एक सफल फिल्म के इंतजार में थे। उन्होंने नरगिस को उस समय प्रपोज किया, जब वह शिखर थीं और सनील चंद सीढ़ियाँ चढ़े ही थे। सुनील का परंपरावादी और प्रेमी स्वभाव नरगिस को पसंद आया, लेकिन वह इस बारे किसी से राय नहीं कर सकती थीं। उन्होंने सुनील की बहन से इस पर चर्चा की और विवाह के लिए स्वीकृति दी। पहले तो उनकी माँ ने जातीय समस्या के बारे में सोचा, पर अपने बेटे की खुशी के लिए हामी भर दी।

मुम्बई के सांताक्रूज के आर्य समाज मन्दिर में उनकी शादी शाम सात बजे होने वाली थी और दुल्हन बहुत देर तक नहीं पहुँची। सभी लोग तीन घंटे तक इंतजार करते रहे। सुनील दत्त को लगा कि नरगिस ने उन्हें धोखा दिया है। नरगिस टैक्सी में इस उत्कंठा से बैठी रही कि आखिर यह मुम्बई का ट्रैफिक जाम उन्हें शादी भी करने देगा या नहीं? इस प्रकार सुनील उनका इंतजार करते रहे। यह सोचकर वह फोन करने भी नहीं जा सके कि नरगिस यह न सोचे कि उन्होंने धोखा दे दिया है। आखिर नरगिस आई और उनकी शादी 11 मार्च 1958 को हुई। जब वह विवाह के बंधन में बँध रहे थे, उस समय आधी रात होने आई थी। उनके विवाह से नरगिस के भाईयों को खासी खुशी नहीं हुई। यहाँ तक कि अख्तर ने उनसे मिलने से इंकार कर दिया। इंडस्ट्री में अफवाहों का एक दौर शुरू हुआ। फिल्म वालों के अनुसार एक माँ ने अपने बेटे से शादी कर ली थी। नरगिस के लिए विवाह एक प्रकार से घर

पहुँचने का क्षण था। वह जीवन की परेशानियों, उलझनों से बचकर अपने घर और अपनी मंजील पर पहुँच चुकी थीं। उनके अनुसार सुनील धरती पर भगवान का अवतार थे और वह उनकी उपासक थीं। यह नरगिस के प्रेम का चरम था। सुनील दत्त ने अपने व्यक्तिगत जीवन और काम को हमेशा अलग रखा। उनके विवाह के समय कई अफवाहें उड़ीं, लेकिन उन्होंने मीडिया से यह कहा कि कुछ भी ऐसा प्रकाशित न करे, जिससे नरगिस के पति की तौहीन होती हो।

शादी के बाद नरगिस की पहली प्राथमिकता उनके पति और परिवार थे। वह घर में इतना रम गई और अपने पति के सभी रिश्तों को उन्होंने बखूबी अपनाया। यहाँ तक कि रिश्तेदारों के जन्मदिन और शादी की सालगिरहें याद रखतीं। उन्हें तोहफे देकर उत्सव भी मनाती थीं। कोमल स्वभाव की नरगिस के साथ उनके ड्राइवर कासिम, उनकी बीवी अमीना और हेयर ड्रेसर मेरी जीवन के आखिरी क्षणों तक रहे। परिवार में रमने के बाद उनके लिए फिल्मों में काम करना मुश्किल था, क्योंकि उनका सारा ध्यान घर पर लगा रहता था। यह आदत घर में बच्चों के आने के बाद बढ़ गई। 1960 में जन्में पहले बच्चे का नाम उन्होंने संजय रखा। उसके बाद नम्रता और प्रिया का जन्म 1962 और 1966 में हुआ। बच्चों के जन्म के बाद नरगिस के लिए घर और पति ही प्राथमिकता हो गए। वह चाहती थीं कि उनके पति कुछ नवीन करें। सुनील ने अजंता आर्ट प्रोडक्शन शुरू की और फिल्मों का निर्माण किया। उन्होंने 'मुझे जीने दो' बनाई, जो डाकू समस्या पर बनी थी। इसके बाद नरगिस ने लिखी एक पात्रीय फिल्म 'यादें' बनाई। भारतीय दर्शकों के मन में इस प्रकार की फिल्मों के लिए कोई स्थान नहीं था। दो फिल्मों में असफलता ने सुनील दत्त को काफी परेशान किया। उसी दौरान अख्तर हुसैन की हालत सुनील से भी बुरी थी, तब नरगिस ने घर में व्यस्त होने के बाद भी 'रात और दिन' में डबल रोल किया। इस फिल्म की स्थिति अच्छी रही और यह फिल्म तीनों भाई-बहन को साथ लाने में कामयाब रही। इसके बाद दक्षिण के एस.एस. वासन उनके पास फिल्म का प्रस्ताव लेकर आए। उन्होंने नरगिस को इसमें रोल करने के लिए ब्लैंक चेक दिया। नरगिस ने उन्हें यह कहकर मना कर दिया कि इस समय मैं तीन फिल्में एक साथ कर रही हूँ जिनका नाम है संजू, अंजू और प्रिया और इस समय मैं किसी और फिल्म

में काम नहीं कर सकती हूँ। वासन कुछ बोले नहीं और नरगिस का यह समर्पित रूप देखकर दंग रह गए। नरगिस ने उस समय रिटायरमेंट लिया, जब उनका काम लोकप्रियता के चरम पर था। लेकिन उन्होंने परिवार को समय देना सही समझा।